मध्यकालीन संगीत शिक्षण का परिवर्तित स्वरूप–घराने

डॉ. सविता उप्पल
प्राचार्य, स्वामी गंगागिरी जनता गर्ल्ज़ कालेज, रायकोट, लुधियाना

प्राचीन गुरू–शिष्य परम्परा ने कालान्तर में 'घरानों' का रूप ले लिया। डा. शरच्चन्द्र श्रीधर परांजपे के अनुसार, घराना अथवा सम्प्रदाय, गुरू तथा शिष्य के संयोग से बनता है। यह गुरू–शिष्य परम्परा शास्त्र तथा कला दोनों के लिए आवश्यक मानी गयी है। संगीत कला के संदर्भ में योग्यता की परख रसिकों के सामने सफल प्रदर्शन में निहित है। शास्त्र अथवा कला के सूक्ष्म अंगों का ग्रहण तब तक संभव नहीं, जब तक योग्य आचार्य से शिक्षा न ली जाए। विद्या वही सफल होती है, जो सही रूप से सीखी जाती है। विद्या या कला की सफलता में जितना योगदान एक योग्य शिष्य का होता है, उतना ही एक योग्य आचार्य का भी।

भारतीय शास्त्रीय संगीत में 'घराना' का अर्थ है– किसी महान संगीतज्ञ की शिष्य–परम्परा। प्रत्येक घराने की अपनी विशेषताएं होती हैं। जैसे– अपना एक विशेष अंदाज, गाने का ढंग, बंदिशों का प्रस्तुतीकरण और किसी स्वर अथवा शब्द के उच्चारण का विशेष ढंग। इन्हीं विशेषताओं के आधार पर एक घराने को दूसरे घराने से अलग किया जाता है। यद्यपि एक ही घराने के दो अलग व्यक्तियों के प्रस्तुतीकरण में भी अन्तर दिखाई देता है, फिर भी कुछ ऐसे विशिष्ट तत्व होते हैं, जिनसे हमें शीघ्र ही यह पता चल जाता है कि दोनों व्यक्ति एक ही घराने के हैं।

एक घराना अकस्मात ही अस्तित्व में नहीं आ जाता, और न ही यह किसी एक विशेष व्यक्ति के प्रयत्नों से बनाया जा सकता है। सामान्यतः एक घराना बनने में लम्बा समय लगता है। वा.ह. देशपांडे ने घराने की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए कहा है कि– प्रत्येक घराना किसी एक प्रभावशाली गुरू की आवाज की प्रकृति पर आधारित होता है। उस घराने से संबंधित शिष्यों को उस घराने की रीतियों, अनुशासन तथा कायदों का पालन करना होता है। अनेक पीढ़ियों तक यह सिलसिला चलने पर ही 'घराना' घराने की प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकता है।'

घरानेदारी शिक्षण विधि के बारे में सम्यक् शोध करने पर ज्ञात होता है कि घरानों की निर्मिति मुख्यतः गुरू–शिष्य परम्परा पर ही आधारित है। प्रायः गुरू एक समय में एक ही शिष्य को सिखाता है। गुरू अपनी आवाज से रियाज और परिश्रम से जिस सुन्दर गायकी का निर्माण करता है, उसी को वह अपने शिष्यों के कण्ठ में उतारने के लिए सालों तक प्रयत्न करता है।

घरानों में राग–संबंधी नियम आदि प्रायः एक होते हुए भी कुछ विशेषताओं के कारण उनमें कुछ अंतर अवश्य रहता है। प्राकृतिक दृष्टि से एक व्यक्ति की कण्ठ ध्वनि दूसरे से भिन्न होती है। कुछ की आवाज पतली, कुछ की मोटी, कुछ की मधुर, कुछ की कर्कश और कुछ की सपाट होती है। कंठ ध्वनि के अनुसार ही कोई आलाप पर जोर देता है, कोई तान पर। खटका, मींड, गमक, मुर्की आदि का प्रयोग भी आवाज़ की प्रकृति और उसके गुण आदि पर निर्भर करता है। इससे यह पता चलता है कि अलग–अलग घरानों के प्रवर्तकों ने अपनी–अपनी आवाज़ पर जंचने वाली गायकी को अपनाया और उसे अपने शिष्यों को सिखाया। शिष्यों ने भी अपने गुरू की गायकी का पूर्ण रूप से अनुकरण करने का प्रयत्न किया और अपनी आवाज़ में गुरू की गायकी की पूरी छाप दिखाने का प्रयास किया। परन्तु कई बार शिष्य ने गुरू की गायकी का अंधानुकरण भी किया। यदि किसी घराने के संस्थापक किसी शारीरिक अथवा अन्य कारण से शब्दों का स्पष्ट उच्चारण नहीं कर पाए, तो शिष्यों ने पूर्णतः स्वस्थ होने पर भी उसे घराने की पहचान मानकर अपनाया और इस प्रकार यह विशेषता घरानों का आधार बन गई।

'घराना' बनने के पांच मुख्य आधार बताए गए हैं–

1. स्वर संग्रह भेद
2. स्वर–रचना भेद
3. घटकों की प्रमुखता का भेद
4. अलंकार या वर्ण भेद
5. उच्चारण भेद

राग में स्वर संग्रह भेद से उसके अनेक प्रकार बने जाते हैं। जैसे– कुछ घरानों में रागेश्वरी में गायक दोनों निषाद लेते हैं। इसी प्रकार स्वर रचना भेद से भी राग के स्वरूप में अन्तर आ जाता है। जैसे राग यमन में तीव्र मध्यम तथा अन्य

सभी शुद्ध स्वरों का प्रयोग सर्वमान्य है। लेकिन कुछ घरानेदार गायक राग की अवतारणा–नि़ रे ग म प– से करते हैं।

घटकों की प्रमुखता भी विभिन्न घरानों को परस्पर अलग करती है। संगीत का आधार स्वर, लय और ताल होते हैं। परन्तु प्रयोग के समय इनके अनुपात में अंतर होने से गायकी में विभिन्नता स्पष्ट हो जाती है। उदाहरणतः आगरा घराने के गायक ताल को अधिक महत्व देते हैं, जबकि किराना घराना के गायक ताल की अपेक्षा स्वर की प्रधानता मानते हैं। अलंकार भी इसी प्रकार विभिन्न घरानों की गायकी में अंतर स्पष्ट कर देते हैं। यथा–जयपुर घराने के गायक आलंकारिक तानों का प्रयोग करते हैं और ग्वालियर घराने के गायक सीधी सपाट तानों का प्रयोग करते हैं। उच्चारण भेद भी विभिन्न घरानों की गायकी को पहचानने में सहायक होता है।

प्रतिभाशाली गायकों की गायन शैलियों के आधार पर 'घराने' बनते हैं। योग्य घरानेदार गुरू से शिक्षा ग्रहण करने के उपरांत अपनी कल्पना शक्ति, भावाभिव्यक्ति की क्षमता, बुद्धि एवं कला कौशल से गायकी को सुंदर, सरस, आकर्षक एवं कलात्मक बनाने का प्रयत्न करने से ही घराना प्रतिष्ठा प्राप्त करता है।

सांगीतिक दृष्टि से प्रत्येक घराने में कुछ असाधारण तत्व होते हैं, जिन्हें उस घराने की विशेषताएं कहा जा सकता है। जैसे–

1. प्रत्येक घराने का अपना कलात्मक कायदा होता है।

2. प्रत्येक घराना अपने प्रवर्त्तक की गायकी के विशेष 'अंदाज़' का ढंग अपनाता है।

3. प्रत्येक घराने के अपने कुछ प्रिय राग होते हैं।

4. प्रत्येक घराने की विभिन्न रागों में अपनी विशेष बंदिशें होती हैं।

यहां केवल दो प्रमुख घरानों की विशेषताओं का संक्षिप्त वर्णन आवश्यक है जिससे मध्यकालीन संगीत–शिक्षण (घरानेदारी प्रशिक्षण) को अधिक स्पष्टता से दिखाया जा सके।

दिल्ली घराने की विशेषताएं

इस घराने की एक विशिष्ट गायकी है। प्रारम्भ में यह घराना मुख्यतः सारंगी वादकों से सम्बद्ध था। इसलिए इसकी विलम्बित लय की 'चीज़ों' में अधिकतर

गमक, लहक, सूत, मींड आदि का प्रयोग तथा मध्य लय में स्वरों का आपसी लड़–गुंथाव और जोड़–तोड़ का काम इस घराने की प्रमुख विशेषताएं हैं। इस घराने के गायकों की जटिल, कठिन तथा बल–पेंच वाली तानों को श्रोतागण अधिक पसंद करते हैं। तानों की जटिलता और विविधता इस घराने को अन्य सभी घरानों से अलग कर देती है। इस घराने में मध्य लय वाले रागों के लिए आड़ा–चौताल एवं फरोदस्त ताल आदि तालें बेहतर मानी जाती हैं। विलंबित ख्याल के लिए तिलवाड़ा, झूमरा और सवारी तथा द्रुत ख्यालों की बंदिश के लिए तीनताल, एकताल, रूपक आदि तालों का प्रयोग किया जाता है।

ग्वालियर घराने की विशेषताएं

ग्वालियर घराने की गायकी की भी कतिपय निजी विशेषताएं हैं। खुली तथा बुलंद आवाज का प्रयोग इस घराने में अधिकाधिक किया जाता है। आवाज को दबाना या छिपाना इस घराने में निषिद्ध है। आवाज को तीनों सप्तकों के लिए तैयार करने में विशिष्ट स्वर साधना की दीक्षा यहां दी जाती है। अस्थायी एवं अन्तरा गाने की इसकी अपनी शैली है। अस्थायी गाने से पूर्व प्रथम कुछ राग–दर्शन आलाप किए जाते हैं और बाद में अस्थायी या स्थायी विलंबित लय में आरम्भ की जाती है। स्थायी एक बार स्पष्ट गा लेने के बाद ख्याल का मुखड़ा लिया जाता है और फिर आलापचारी आरम्भ होती है। स्वरों की बढ़त धीरे–धीरे करते हुए तार 'सं' पर पहुंच जाता है। फिर अन्तरे के मुख को लेकर तार सप्तक में आलाप किया जाता है। आलापचारी समाप्त होने के बाद बोलतानों एवं अन्य तानों की बौछार आरंभ होती है।

यह कहा जाता है कि ग्वालियर गायकी अष्ट अंग प्रधान है। आलाप, बोल आलाप, बोलतान, तानों के विभिन्न प्रकार, लयकारियों की विभिन्नता–यह सब ग्वालियर घराने की गायकी के मुख्य अंग हैं। मींड और बहलावा तो इस गायकी के प्राण हैं। ग्वालियर घराने के गायकों द्वारा अधिकतर मध्य लय में ख्याल गाए जाते हैं।

ग्वालियर गायकी के सौन्दर्यपूर्ण ख्यालों में हमें ध्रुपद–घमार की शाही शान, टप्पा अंग की तानें, ठुमरी का मन–लुभावना ढंग और तराने की जटिल लयकारी वाली तानें मिलती हैं। विलम्बित, मध्य, द्रुत तथा अतिद्रुत लय में तरानों का ग्वालियर घराने के पास एक बहुमूल्य ख़जाना है। ग्वालियर घराने के गायक

अधिकतर सिद्ध राग जैस भैरव, ललित, तोड़ी, बिलावल, जौनपुरी, आसावरी, सारंग, भीमपलासी, मुल्तानी श्री, यमन, हमीर, मियां मल्हार, गौड मल्हार, दरबारी, मालकौंस, बागेश्री, बसन्त आदि गाते हैं। इनके ख्याल विभिन्न तालों में बंधे होते हैं। जैसे–तिलवाड़ा, एकताल, आड़ा–चौताल, झूमरा, तीनताल और सवारी आदि।

ग्वालियर घराने में टप्पे और ठुमरियों की विविधता तो है ही, इसके साथ ही बहुत सारे चतुरंग और त्रिवट भी हैं। पूरे गायन में राग की पवित्रता बनाए रखना इस घराने में बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है। बुलंद आवाज में स्पष्ट तथा आत्मविश्वासयुक्त स्वर लगाना ही इस गायकी की विशेषता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि घरानेदार–शिक्षा विधि से संगीत की लोकप्रियता में असाधारण वृद्धि हुई और कालान्तर में नगर अथवा स्थान विशेष के नाम पर अन्यान्य घरानों का उदय एवं नामकरण हुआ। इनमें संगीत कला के अधिकाधिक शिष्यों को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिला और उन्होंने अपने–अपने घरानों की ख्याति को न केवल अक्षुण्ण बनाए रखा, अपितु उनका संवर्धन भी किया। इन घरानों से शिक्षा प्राप्त अनेक कलाकारों के परिश्रम और साधना के फलस्वरूप आज देश में संगीत के घरानों की एक विशाल परम्परा विद्यमान है।